अपभ्रंश कथा-काव्योंकी भारतीय संस्कृतिको देन

डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल

प्राकृत भाषाके समान अपभ्रंश भाषाको भी सैकड़ों वर्षों तक भारतकी लोकभाषा अथवा जनभाषा होनेका सौभाग्य मिला। भारतीय साहित्यमें इसकी लोकप्रियताके सैकड़ों उदाहरण उपलब्ध होते हैं। ईस्वी ६ठी शताब्दी पूर्व ही अपभ्रंशका खूब प्रचलन हो गया था। संस्कृत और प्राकृतके साथ अपभ्रंशका भी पुराणों व्याकरणों तथा शिलालेखोंमें उल्लेख होने लगा था। वैय्याकरणोंने प्राकृत व्याकरणोंमें प्राकृतके साथ अपभ्रंशपर भी खूब विचार किया। प्रारम्भमें यह प्रादेशिक बोलियोंके रूपमें आगे बढ़ी। आठवीं शताब्दी तक यह जन-भाषाके साथ-साथ काव्य भाषा भी बन गयी और बड़े-बड़े कवियोंका इस भाषामें काव्य-निर्माण करनेकी ओर ध्यान जाने लगा। यद्यपि अपभ्रंश भाषामें अभी तक स्वयम्भूके पूर्वकी कोई रचना उपलब्ध नहीं हो सकी है लेकिन स्वयं स्वयंभूने अपने पूर्ववर्त्ती एवं समकालीन जिन कवियोंका उल्लेख किया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस भाषामें ८ वीं शताब्दीके पूर्व ही काव्यरचना होने लगी थी और यही नहीं उसे साहित्यिक क्षेत्रमें समादर भी मिलने लगा था।

८वीं शताब्दीके पश्चात् तो अपभ्रंश भाषाको काव्यरचनाके क्षेत्रमें खूब प्रोत्साहन मिला। देशके शासक वर्ग, व्यापारी वर्ग एवं स्वाध्याय प्रेमी जनताने अपभ्रंशके कवियोंसे काव्य निर्माण करनेका विशेष आग्रह किया। इससे कवियोंको आश्रयके अतिरिक्त अत्यधिक सम्मान भी मिलने लगा और इससे इस भाषामें काव्य, चरित, कथा, पुराण एवं अध्यात्म साहित्य खूब लिखा गया और इसी कारण उत्तरसे दक्षिण तक तथा पूर्वसे पश्चिम तककी भारतीय संस्कृतिको एकरूपता देनेमें अत्यधिक सहायता मिली। लेकिन ६० वर्ष पूर्व तक अधिकांश विद्वानोंका यही अनुमान रहा कि इस भाषाका साहित्य विलुप्त हो चुका है। सर्वप्रथम सन् १८८७में जब रिचर्ड पिशेलने सिद्ध-हेमशब्दानुशासनका प्रकाशन कराया तो विद्वानोंका अपभ्रंश भाषाकी रचनाओंकी ओर ध्यान जाना प्रारम्भ हुआ। हर्मन जैकोबीको सर्वप्रथम जब भविसयत्तकहाकी एक पाण्डुलिपि उपलब्ध हुई तो इस भाषाकी रचनाओंके अस्तित्वकी चर्चा होने लगी और जब उन्होंने सन् १९१८में इसका जर्मन भाषामें प्रथम प्रकाशन कराया तो पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानोंकी इस भाषाके साहित्यको खोजनेकी ओर रुचि जाग्रत हुई और सन् १९२३में गुणे एवं दलालने 'भविसयत्तकहा' का ही सम्पादन करके उसके प्रकाशनका श्रेय प्राप्त किया। इसके पश्चात् तो देशके अनेक विद्वानोंका ध्यान इस भाषाकी कृतियोंकी ओर जाने लगा और कुछ ही वर्षोंमें राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात और देहलीके ग्रन्थालयोंमें एकके बाद दूसरी रचनाकी उपलब्धि होने लगी। और आज तो इसका विशाल साहित्य सामने आ चुका है। लेकिन अपभ्रंशकी अधिकांश कृतियां अभी तक अप्रकाशित हैं। ८वीं शताब्दीसे लेकर १५ वीं शताब्दी तक इस भाषामें अबाध गतिसे रचनाएँ लिखी गयीं। किन्तु संवत् १७०० तक इसमें साहित्य निर्माण होता रहा। अब तक उपलब्ध साहित्यमें यदि महाकवि स्वयम्भूको प्रथम कवि होनेका सौभाग्य प्राप्त है तो पंडित भगवतीदासको अन्तिम कवि होनेका श्रेय भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। मृगांकलेखाचरित इनकी अन्तिम कृति है जिसका निर्माण देहलीमें हुआ था।

उपलब्ध अपभ्रंश साहित्य मुख्यतः चरित एवं कथामूलक है। पुराण साहित्यकी भी इसमें लोकप्रियता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रही और महाकवि पुष्पदन्तने महापुराण लिखकर विद्वानोंका ध्यान आकृष्ट किया। वैसे प्राकृत साहित्यकी सभी मुख्य प्रवृत्तियां इस साहित्यको प्राप्त हुई हैं। इसलिए एक लम्बे समय तक अपभ्रंश कृतियाँ भी प्राकृत कृतियाँ समझ ली गयीं। प्राकृत भाषाका जिस प्रकार कथा साहित्य विशाल एवं समृद्ध है तथा लोक रुचिकारी है उसी प्रकार अपभ्रंशका कथा साहित्य भी अत्यधिक समृद्ध है। उसमें लोकरुचिके सभी तत्त्व विद्यमान हैं। यह साहित्य प्रेमाख्यानक, व्रतमाहात्म्यमूलक, उपदेशात्मक एवं चरितमूलक है। विलासवईकहा, भविसयत्तकहा, जिणयत्तकहा, सिरिवालचरित, धम्मपरिक्खा, पुण्णासवकहा, सत्तवसणकहा, सिद्धचक्ककहा आदिके रूपोंसे इसका कथा साहित्य अत्यधिक समृद्ध ही नहीं है किन्तु उसमें भारतीय संस्कृतिकी प्रमुख विधाओंका अच्छा दर्शन होता है। उसके साहित्यकी कितनी ही विधाओंको सुरक्षित रखा है और उनका पूर्णतया प्रतिपालन भी किया गया है। इन कथाकृतियोंसे सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियोंके खूब दर्शन होते हैं। इनमें वैभवके साथ-साथ देशमें व्याप्त निर्धनता एवं पराधीनताके भी दर्शन होते हैं। कथाओंके विवरणके अतिरिक्त काव्यात्मक वर्णन, प्रकृति चित्रण, रसात्मक व्यञ्जना एवं मनोवैज्ञानिकताकी उपलब्धि इन कथा काव्योंकी प्रमुख विशेषता है। लोक पक्षका सबल जीवन-दर्शन भी इन कथा-काव्योंमें खूब मिलता है।

सामाजिक स्थिति

ये कथा-काव्य तत्कालीन समाजकी सजीव मूर्ति उपस्थित करते हैं। इनमें सामाजिक स्थिति, विबाह, संयुक्त परिवार, वर्ण, जाति, भोजन, आभूषण, धार्मिक आचरण आदिके सम्बन्धमें रोचक बातोंका वर्णन मिलता है। ये कथा-काव्य इस दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिके मूल पोषक रहे हैं। और सारे देशको एकात्मकतामें बाँधनेमें समर्थ रहे हैं। यहाँ अब मैं आपके समक्ष लोकतत्त्वोंके बारेमें विस्तृत प्रकाश डाल रहा हूँ।

देशमें कितनी ही जातियाँ और उपजातियाँ थीं। जिणदत्त चौपाईमें रल्ह कविने २४ प्रकारकी नकार एवं २४ प्रकारकी मकार नामावलि जातियोंके नाम गिनाये हैं। ये सभी उस समय बसन्तपुरमें रहती थीं। कुछ ऐसी जातियाँ भी थीं जो अशान्ति, कलह, चोरी आदि कार्योंमें विशेष रुचि लेती थीं। समाजमें जुआ खेलनेका काफी प्रचार था। नगरोंमें जुआरी होते थे तथा वेश्याएँ होती थीं। कभी-कभी भद्र व्यक्ति भी अपनी सन्तानको गार्हस्थ जीवनमें उतारनेके पहिले ऐसे स्थानोंपर भेजा करते थे। जुआ खेलनेको समाजविरोधी नहीं समझा जाता था। जिणदत्त एक ही बारमें ११ करोड़का दाव हार गया था।

खेलत भई जिणदत्तहि हारि, जूवारिन्हु जीति पच्चारि।
भणइ रल्हु हम नाहीं खोहि, हारिउ दव्वु एगारह कोडि॥

इन कथा-काव्योंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि उस युगमें भी वैवाहिक रीति-रिवाज आजकी ही भाँति समाजमें प्रचलित थे। विवाहके लिए मण्डप गाड़े जाते थे। रंगावली पूरी जाती थी। मंगल कलश और बन्दनवार सजाये जाते थे। मंगल वाद्योंके साथ भाँवरें पड़ती थीं और लोगोंको भोज दिया जाता था। बारात खूब सज-धजके साथ जाती थी। भविसयत्तकहामें धनवइ सेठके विवाहका जो वर्णन किया गया है उसमें लोकजीवनका यथार्थ चित्र मिलता है। विवाहमें दहेज देनेकी प्रथा थी लेकिन कभी-कभी वरपक्षवाले दहेजको अस्वीकार भी कर दिया करते थे। भविसयत्तकहामें सवर्ण मणि और रत्नोंका लोभ छोड़कर धनदत्तकी सुन्दर पुत्रीको ही सबसे अच्छा उपहार समझा जाता था लेकिन जिनदत्तको चारों विवाहोंमें इतना अधिक दहेज मिला था कि उससे सम्हाले भी नहीं सम्हलाता था। कोटि भट श्रीपालको भी मैना सुन्दरीके साथ विवाहके अतिरिक्त अन्य विवाहोंमें खूब धन-दौलत प्राप्त हुआ था। कभी-कभी राजा अपनी पुत्रीके विवाहमें वरको अपना आधा राज्य भी दिया करते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाजमें बहु-विवाहकी प्रथाको मान्यता प्राप्त थी। जिसके जितनी अधिक पत्नियाँ होती थीं उसको उतना ही ऐश्वर्यशाली एवं भाग्यवान समझा जाता था। भविष्यदत्तके पिता दो विवाह करते हैं। जिनदत्तने चार विवाह किये। श्रीपालने भी चारसे अधिक विवाह किये थे। पदुम्न जहाँ-जहाँ भी जाते हैं उन्हें उपहारमें वधू मिलती है। इसी तरह जीवन्धरके जीवनमें भी विवाहोंकी भीड़ लग जाती है। विलासवईकहाके नायक विलासवती इन्द्रावती एवं पहुपावतीके साथ विबाह करते हैं।

पुत्रजन्मपर आजके ही समान पहिले भी खूब खुशियाँ मनायी जाती थीं। गरीबों, अनाथों और अपाहिजोंको उस अवसरपर खूब दान दिया जाता था। जिनदत्तके जन्मोत्सवपर उसके पिताने दो करोड़का दान दिया था।

देहि तंबोलत फोफल पाण, दीने चीर पटोले पान।
पूत बधावा नाहीं खोरि, दीने सेठि दान कुइ कोडि॥

ज्योतिषियोंकी समाजमें काफी प्रतिष्ठा थी। भविष्यवाणियोंपर खूब विश्वास किया जाता था। राजा महाराजा भी कभी-कभी इन्हीं भयिष्यवाणियोंके आधारपर अपनी कन्याओंका विवाह करते थे। जिनदत्तका शृंगारमतीके साथ, श्रीपालका गुणमाला एवं मदनमंजरीके साथ विवाहका आधार ये ही भविष्यवाणियाँ थीं। इसी तरह सहस्रकूट चैत्यालयके किवाड़ खोलने, समुद्र पार करने एवं तैरते हुए विद्याधरोंके देशमें पहुँचनेपर भी विवाह सम्पन्न हो जाते थे। श्रीपालने एक स्थानपर नैमित्तिककी भी भविष्यवाणीपर अपना पूरा विश्वास व्यक्त किया है।

णिमित्तउ जे कहइ णरेसरु, मो किअ सव्वु होइ परमेसरु।

शृंगार एवं आभूषणोंमें स्त्रियोंकी स्वाभाविक रुचि थी। सिरिपालकहामें गुण सुन्दरी अपनेको सोनेके आभूषणोंसे सजाती है। सोनेका हार वक्षस्थलपर धारण करती है। जिणदत्तकी प्रथम पत्नी बिमलमतीकी कंचुकी ही ९ करोड़में बिकी थी वह कंचुकी मोती, माणिक एवं हीरोंसे जड़ी हुई थी।

माणिक रतन पदारथ जड़ी, विचि विच हीरा सोने घड़ी।
ठए पासि मुत्ताहल जोड़ि, लइ हइ मोलि सु णम धन कोड़ि॥

धार्मिक जीवन

सभी स्त्री-पुरुष धार्मिक जीवन व्यतीत करते थे। भगवान्‌की अष्टमंगल द्रव्यसे पूजा की जाती थी। श्रीपालका कुष्ट रोग तीर्थंकरकी प्रतिमाके अभिषेकके जलसे दूर हुआ था। गुणमालाके विवाहके पूर्व वह सहस्रकूट चैत्यालयके दर्शन करने गया था। जिनदत्त विमान द्वारा अकृत्रिम चैत्यालयोंकी एवं कैलासपर स्थित जिनेन्द्रदेवकी वन्दना करने गया था। जिनदत्तका पिता भी प्रतिदिन भगवान्‌की वन्दना-पूजा करता था। श्रीपाल, जीवन्धर, भविष्यदत्त, जिनदत्त, आदि सभी नायक जीवनके अन्तिम वर्षोंमें साधु-जीवन ग्रहण करते हैं और अन्तमें तपस्या करके मुक्ति अथवा स्वर्ग-लाभ लेते हैं। भविसयत्तकहाका मूल आधार श्रुतपंचमीके माहात्म्यको बतलाना है। इसी तरह श्रीपालकी जीवन-कथा अष्टाह्निका व्रतका आधार है। पुण्णासवकहा एवं सत्तवसणकहाका प्रमुख उद्देश्य पाठकोंके जीवनमें धर्मके प्रति अथवा सत् कार्योंके प्रति रागभाव उत्पन्न करना है। सात व्यसनोंसे दूर रखनेके लिए सत्तवसणकहाकी रचना की गयी। इन कथा-काव्योंके आधारपर उस समयके राजनैतिक जीवनकी कोई अच्छी तस्वीर हमारे सामने उपस्थित नहीं होती है। देशमें छोटे-छोटे शासक थे और वे एक-दूसरेसे लड़ा करते थे। जिनदत्तचरितमें ऐसे कितने हीका उल्लेख आता है। जिनदत्त जब अतुल सम्पत्तिके साथ अपने नगरमें वापस लौटता है तो वहाँका राजा उसे अपने आधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राज्यका स्वामी बना देता है। इन कथा-काव्योंमें युद्धका अत्यन्त विस्तारसे वर्णन हुआ है। युद्धके तत्कालीन अस्त्र-शस्त्रोंके बारेमें भी इन कथा-काव्योंसे अच्छी जानकारी मिलती है। नगरमें किले होते थे, युद्धकी मोर्चा-बन्दी उसमें की जाती थी।

जिणदत्तचौपईमें धनुष, तलवार, ढीकलु, गोफणी, आदि शस्त्रोंका नाम उल्लेख किया गया है। प्रत्येक शासकके पास चतुरंगी सेन होती थी। युद्धके विशेष बाजे होते थे तथा ढोल, भेरी, निशान बजनेसे सैनिकोंमें युद्धोन्माद बढ़ता रहता था। श्रीपालका अपने चर्चाके साथ होनेवाले युद्धका कविने बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। राजा हाथीपर बैठकर युद्धके लिए प्रस्थान करता था वह अपने चारों ओर अंगरक्षकोंसे घिरा रहता था।

जनतामें राजाका विशेष आतंक रहता था, कोई भी उसकी आज्ञाका उलंघन करनेकी सामर्थ्य नहीं रखता था। व्यापारियोंसे छोटे-छोटे राजा भी खूब भेंट लिया करते थे। भविष्यदत्तने तिलकद्वीप पहुँचकर वहाँके राजाको खूब उपहार दिये थे। इन राजाओंमें छोटी-छोटी बातोंको लेकर जब कभी युद्ध छिड़ जाता था। इनमें कन्या, उपहार आदिके कारण प्रमुख रहे हैं।

आर्थिक स्थिति

इन कथा-काव्योंमें समूचे देशमें व्यापारकी एक-सी स्थिति मिलती है। देशका व्यापार पूर्णतः वणिक् वर्गके हाथमें रहता था। वणिक्-पुत्र टोलियोंमें अपने नगरसे बाहर व्यापारके लिए जाते थे। समुद्री मार्गसे वे जहाजमें बैठकर छोटे-छोटे द्वीपोंमें व्यापारके लिए जाते थे और वहाँसे अतुल सम्पत्ति लेकर लौटते थे। जिणदत्त सागरदत्तके साथ जब व्यापारके लिए विदेश गया था तो उसके साथ कितने ही वणिक्-पुत्र थे। उनके साथ विविध प्रकारकी विक्रीकी वस्तुएँ थीं जो विदेशोंमें मंहगी थीं और देशमें सस्ती थीं। बैलोंपर सामान लादकर वे विदेशोंमें जाते थे। द्वीपोंमें जानेके लिए वे जहाजोंका सहारा लिया करते थे। छोटे-छोटे जहाजोंका समूह होता था और उनका एक सरदार अथवा नायक होता था, सभी व्यापारी उसके अधीन रहते थे। श्रीपालकहामें धवल सेठकी अतुल सम्पत्तिका वर्णन किया गया है। भविष्यदत्त, जिणदत्त और जीवन्धर आदि सभी श्रेष्ठिपुत्र थे जो व्यापारके लिए बाहर गये थे और वहाँसे अतुल सम्पत्ति लेकर लौटे थे। इन कथा-काव्योंमें जनताकी आर्थिक स्थिति अच्छी थी ऐसा आभास होता है लेकिन फिर भी सम्पत्तिका एका-धिकार व्यापारी वर्ग तक ही सीमित था।

उस समय सिंघल द्वीप व्यापारके लिए प्रमुख आकर्षणका केन्द्र था। जिणदत्त व्यापारके लिए सिंघल द्वीप गया था वहाँ जवाहरातका खूब व्यापार होता था। लेन-देन वस्तुओंमें अधिक होता था, सिक्कोंका चलन कम था। उन दिनों द्वीपोंमें व्यापारी खूब मुनाफा कमाते थे। सिंघल द्वीपके अतिरिक्त भविसयत्तकहामें मदनागद्वीप, तिलकद्वीप, कंचनद्वीप आदिका वर्णन भी मिलता है।

इन कथा काव्योंमें ग्राम एवं नगरोंका वर्णन भी बहुत हुआ है। भविसयत्तकहामें गजपुर नगरमें पथिक जन पेड़ोंकी छायामें घूमते हैं। हास-परिहास करते हुए गन्नेका रसपान करते हैं। जिणदत्तचौपईमें जो बसन्तपुरनगरका वर्णन किया गया है उसके अनुसार वहाँके सभी निवासी प्रेमसे रहते थे। कोली, माली, पटवा एवं सपेरा भी दया पालते थे। ब्राह्मण एवं क्षत्रिय समाज भी चरमके संयोगसे वृत्त रहते थे। नगरके बाहर उद्यान होते थे। सागरदत्त सेठके उद्यानमें विविध पौधे थे। नारियल एवं आमके वृक्ष थे। नारंगी, छुहारा, दाख, पिंड, खजूर, सुपारी, जायफल, इलायची, लौंग आदि-आदि फलोंके पेड़ थे। पुष्पोंमें मरूआ, मालती, चम्पा, रायचम्पा, मुचकुन्द, मौलसिरी, जयापुष्प, पाउल, गुडहल आदिके नाम उल्लेखनीय हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेमाख्यानक तत्त्व

अपभ्रंश भाषाके इन कथा-काव्योंमें प्रेमाख्यानक तत्त्वका अच्छी तरह पल्लवन हुआ है । हिन्दी भाषामें जिन प्रेमाख्यानक काव्योंकी सर्जना हुई उसमें अपभ्रंशके कथा काव्यका अत्यधिक प्रभाव है । विलासवईकहा, भविसयत्तकहा, जिणदत्तचौपई, श्रीपालकहा आदि सभीमें प्रेमाख्यानक काव्य भरा पड़ा है । भविसयत्तकहा एवं श्रीपालकहामें विवाह होनेके पश्चात् नवदम्पत्तिमें प्रेमका संचार होता है । भविष्यदत्त वास्तविक प्रेमके कारण ही भविष्यानुरूपाको चतुरतासे प्राप्त करता है और सुमित्राको युद्धके पश्चात् प्राप्त करता है । जिणदत्त पुतलीके रूपमें चित्रित विमलमतीके रूप-सौन्दर्यको देखकर आसक्त हो जाता है, वह अपने आपको भूल जाता है और रूपातीत उस सुन्दरीको पानेके लिए अधीर हो उठता है । इसी प्रसंगमें इस कथा-काव्यमें विमलमतीके सौन्दर्यका जो वर्णन हुआ है वह प्रेमाख्यानक काव्योंका ही रूप है ।

चंपावण्णी सोहइ देह, गल कंदहल तिण्णि जसु देह ।
पीणत्थणि जोव्वण मयसाय उर पोटी कडियल वित्थार ।।

विमलमतीको प्राप्त करनेके पश्चात् भी जिणदत्त उसके प्रेममें डूबा हुआ रहा और अपनी विदेश यात्रासे लौटनेके पश्चात् विरहाग्निमें डूबी हुई अपनी दो पत्नियोंके साथ विमलमतीको पाकर प्रसन्नतासे भर गया । विलासवती कथा तो आदिसे अन्त तक प्रेमाख्यानक काव्य है । इस कथा काव्यमें वर्णित प्रेम विवाहके पूर्वका प्रेम है । राजमार्गपर जाते हुए राजकुमार सनतकुमारके रूपको देखकर विलासवती उसपर मुग्ध हो जाती है और राजमहलकी खिड़कीसे ही फूलोंकी माला अपने प्रेमीके गलेमें डाल देती है । सनतकुमार भी विलासवतीके रूपलावण्यको देखकर उसपर आसक्त हो जाता है । धीरे-धीरे प्रेमकी अग्निमें दोनों ही प्रेमी-प्रेमिका जलने लगते हैं और एक-दूसरेको पानेकी लालसा करते हैं और दोनोंका उद्यानमें साक्षात्कार हो जाता है लेकिन प्रेम प्रणयको तबतक आत्मसात् नहीं करते जबतक कि विवाह बन्धनमें नहीं बँध जाते । इंसके लिए उन्हें काफी वियोग सहना पड़ता है । प्रेमीके वियोगसे विकल होकर विलासवती मध्य रात्रिको सती होनेके लिए श्मशान की ओर प्रस्थान कर देती है । लेकिन मार्गमें वह डाकुओं द्वारा लूट ली जाती है । और एक समुद्री व्यापारी द्वारा खरीद ली जाती है । जहाजके टूट जानेसे वह एक आश्रममें पहुँच जाती है संयोगसे नायक सनतकुमार भी अपनी प्रेमिकाके वियोगसे सन्तप्त उसी आश्रममें पहुँच जाता है और विलासवतीके बिना अपने जीवनको व्यर्थ समझने लगता है । अन्तमें आश्रममें ही वैवाहिक बन्धनमें बँध जाते हैं । इसके पश्चात् भी एक-दूसरेका वियोग होनेपर मृत्युको आलिंगन करनेको तैयार होना नायक-नायिकाके आदर्श प्रेमको प्रकट करता है । इस प्रकार इन कथा-काव्योंमें जिस प्रेम कथानकका चित्रण हुआ है उसका प्रभाव हमें हिन्दीके कुछ प्रेमाख्यानक काव्योंके वर्णनमें मिलता है ।

लेकिन इन सबके अतिरिक्त पुण्णासवकहा, धम्मपरिक्खा, सत्तवसणकहा जैसी कथाकृतियोंमें भारतीय जनजीवनमें सदाचार, नैतिकता, सत्कार्योंमें आस्थाका रूप भरनेका जो प्रयास किया है वह भारतीय संस्कृतिके पूर्णत: अनुरूप है । यह कथाएँ जनजीवनके स्तरको ऊँचा उठानेवाली हैं तथा गत सैकड़ों वर्षोंसे श्रद्धालु पाठकोंको अच्छे पथपर चलनेकी प्रेरणा देती हैं । इस प्रकार इन कथा काव्योंने भारतीय संस्कृतिके एकरूपात्मक स्वरूपको स्थायी रखनेमें तथा उसका विकास करनेमें जो योगदान दिया है वह सर्वथा स्तुत्य है ।

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org